भारतीय बैंकिंग के पांच प्रमुख मुद्दे*

दुव्वुरी सुब्बाराव

मैं सबसे पहले बैंकॉन 2010 सम्मेलन का उद्घाटन करने हेतु आमंत्रित करने के लिए आयोजकों को धन्यवाद देता हूँ। मैं समझता हूँ कि वार्षिक कैलेंडर का यह एक प्रमुख बैंकिंग सम्मेलन है जहाँ बैंकों के शीर्ष प्रबंध-तंत्र तथा उनके अर्थशास्त्री वर्तमान मुद्दों पर विचार-मंथन करते हैं। इस वर्ष के सम्मेलन का विषय *'चिंतन, नवोन्मेष एवं प्रेरणा'* है जो विचारपूर्ण, कल्पनाशील होने के साथ-साथ प्रेरणादायक भी है जो सबसे महत्त्वपूर्ण है।

2. संकट के बाद बैंक, बैंकिंग तथा बैंकरों के प्रति जनता अत्यधिक सजग हो गई है। विश्व भर के बैंकर न केवल आत्मालोचन कर रहे हैं, बल्कि अपने कारोबारी मॉडल तथा कार्य संबंधी नीति की समीक्षा भी कर रहे हैं। साथ ही, संकट से मिले सबक को ध्यान में रखते हुए बैंकिंग विनियमन में सुधार लाने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जोरदार प्रयास हो रहे हैं। बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति (बीसीबीएस) नए बासेल III पैकेज के रूप में कई घटकों को लेकर आई है जिसका उद्देश्य बैंकों को ऐसे प्रणालीगत जोखिमों से बचाना है जिनके चलते सारा विश्व आर्थिक संकट की चपेट में आ गया था। वर्तमान में वित्तीय स्थिरता बोर्ड(एफएसबी) प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं (एसआइएफआइ) से संबंधित मुद्दों तथा समाधान व्यवस्था को सुलझाने, ओवर दि काउंटर (ओटीसी) डेरिवेटिव बाजार में सुधार लाने, समष्टि विवेकपूर्ण ढांचे को विकसित करने तथा विनियमन की परिधि में विस्तार करने (बचाव निधि, प्रतिभूतिकरण, क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियां) के साथ-साथ इनमें सुधार लाने में लगा हुआ है।

3. भारत में हम संकट के बुरे प्रभाव से बचे रहे। इसका मतलब यह नहीं है कि हमें सुधार की जरूरत नहीं है। वैश्वीकृत स्वरूप ले रहे विश्व में हम वैश्विक वित्तीय प्रणाली में कहीं भी होने वाली अस्थिरता से प्रभावित होते हैं। अत: भारतीय बैंकों को चाहिए कि वे जोखिम प्रबंधन के संबंध में भारतीय परिप्रेक्ष्य में अच्छी वैश्विक प्रथाएं अपनाएं। साथ ही, एक राष्ट्र के रूप में हम दो अंकों वाली तथा समावेशी वृद्धि की कामना करते हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में कई चुनौतियां हैं जिनमें हमारी वित्तीय मध्यस्थता को और अधिक कार्यक्षम बनाने की चुनौती भी शामिल है। इसके कारण बैंकों के सम्मुख इस विषय पर एक व्यापक सुधार एजेंडा लाने की चुनौती आ गई है।

* डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा मुंबई में 'बैंकॉन 2010' में 3 दिसंबर 2010 को दिया गया उद्घाटन भाषण।

4. समग्र परिदृश्य को देखते हुए, मुझे यह निर्णय लेने में कठिनाई हुई कि इस उद्घाटन सत्र में मुझे क्या कहना चाहिए । सम्मेलन की विषय-वस्तु के रूप में 'चिंतन, नवोन्मेष एवं प्रेरणा' को चुना गया है और मैं इससे काफी प्रभावित हुआ हूँ। साथ ही, आगे के सत्रों में चर्चा के लिए जिन विषयों को लिया गया है उनकी गहराई तथा व्यापकता से भी मैं काफी प्रभावित हुआ हूँ। सम्मेलन के कार्यक्रम को देखने के बाद मैंने तय किया कि मेरे लिए बेहतर यही होगा कि मैं भारतीय बैंकों को प्रभावित करने वाले कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दे पेश करूँ जो आपके विचार-विमर्श में महत्त्वपूर्ण साबित हो सकते हैं। मैं प्रत्येक मुद्दे पर चर्चा करूँगा और इनमें से कुछेक पर अपना दृष्टिकोण भी प्रस्तुत करूँगा। किंतु मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि हालांकि मैं अपना दृष्टिकोण आपके सामने रख रहा हूँ, फिर भी इन सभी मुद्दों पर बहस की जा सकती है । मैं अपना दृष्टिकोण केवल इसलिए प्रस्तुत कर रहा हूँ ताकि बहस और चर्चा के लिए आधार-भूमि तैयार हो सके।

पहला मुद्दा : क्या भारतीय बैंक बासेल III के लिए तैयार हैं?

5. इस विषय पर, विशेष रूप से हाल की वैश्विक विनियामक गतिविधियों की पृष्ठभूमि में जो पहला मुद्दा ध्यान में आता है वह है : क्या भारतीय बैंक बासेल III के लिए तैयार हैं? बासेल III की आधार-भूमि अब काफी स्पष्ट हो गयी है: उच्चतर एवं अच्छी गुणवत्ता वाली पूंजी; अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत लीवरेज अनुपात; अच्छे समय में ऐसा पूंजी बफर का गठन किया जाना ताकि दबाव वाले समय में उसका उपयोग किया जा सके; चलनिधि का वैश्विक न्यूनतम मानक तथा पर्यवेक्षण, सार्वजनिक प्रकटीकरण और जोखिम प्रबंधन हेतु कड़े मानक।

पूंजी

6. हमारे आकलन के अनुसार भारतीय बैंकों को समग्र स्तर पर नए पूंजी नियमों के साथ मात्रा एवं गुणवत्ता दोनों ही दृष्टि से सामंजस्य

मानदंड 30 जून 2010 को	बासेल III की अपेक्षा	भारतीय बैंकों के लिए वास्तविक मान	
		बासेल II के अंतर्गत	बासेल III अंतर्गत
जोखिम भारित आस्तियों की तुलना में पूंजी (सीआरएआर)%	10.5	14.4	11.7
जिसमें से			
टियर I पूंजी %	8.5	10.0	9.0
सामान्य इक्विटी %	7.0	8.5	7.4

बनाए रखने में कोई समस्या नहीं होगी। विनियामक समायोजनों को ध्यान में रखते हुए बासेल III के तहत बैंकिंग प्रणाली के पूंजी अनुपात का त्वरित अनुमान नीचे सारणी में दर्शाया गया है। यह अनुमान बैंकों द्वारा उनकी परोक्ष विवरणियों में प्रस्तुत आंकड़ों पर आधारित है और ये आनुमानिक आंकड़े हैं। वर्ष के अंत तक बासेल III के अंतिम नियमों के प्रकाशित हो जाने की आशा है जिसके बाद बैंक बासेल III के अनुपालन की अपनी स्थिति की समीक्षा करेंगे। हमें आशा है कि उससे अधिक साफ तस्वीर उभरकर आएगी।

7. उपर्युक्त सारणी के आंकड़ों से स्पष्ट है कि नए पूंजी नियमों के अनुपालन की दृष्टि से भारतीय बैंक अच्छी स्थिति में हैं। फिर भी नोट की जाने वाली एक बात यह है कि तुलनात्मक स्थिति समग्र स्तर पर है; कुछ एक बैंक बासेल III के मानदंडों को पूरा नहीं कर पाएंगे तथा उन्हें अपनी पूंजी में वृद्धि करनी होगी। तथापि, कार्यान्वयन के लिए पर्याप्त लंबा समय दिए जाने को देखते हुए आशा है कि वर्धित अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए बैंक आसानी से समायोजन कर सकेंगे।

अनुचक्रीयता

8. बासेल III पैकेज में पूंजी बफर को शामिल किया गया है ताकि वित्तीय क्षेत्र की अनुचक्रीयता को रोका जा सके। पूंजी बफर जुटाने के लिए बैंकों पर अतिरिक्त लागत का भार पड़ेगा जिसका असर निवेश तथा समग्र वृद्धि पर भी होगा। इस विषय से जुड़ी सामान्य चिंता के अलावा एक अतिरिक्त चिंता भी है जो भारत में अनुचक्रीय पूंजी बफर के निर्धारण के संबंध में उपयोग किए गए चर के संबंध में है। इसके लिए सकल देशी उत्पाद (जीडीपी) की तुलना में ऋण अनुपात को एक सामान्य निर्धारक के रूप में लिया गया है। यह स्पष्ट नहीं है कि क्या यह संकेतक भारतीय संदर्भ में ठीक होगा। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत, जहां यह अनुपात स्थिर है, भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं में संरचनात्मक कारणों से इसके बढ़ने की उम्मीद है, जैसे कि उच्चतर वृद्धि के कारण बढ़ता ऋण मध्यस्थन और साथ ही वित्तीय समावेशन को और गहन बनाने के प्रयास। तथापि, प्रस्तावित ढांचे में लचीलापन है जिसके चलते देशों को अपने देश की स्थिति के अनुरूप स्व-विवेकानुसार 'अनुपालन करें अथवा स्पष्ट करें' वाला ढांचा अपनाने की अनुमति है। उदाहरण के लिए भारत में पूर्व में भी प्रतिचक्रीय नीतियों के रूप में क्षेत्रगत दृष्टिकोण का परीक्षण सही साबित हुआ है और हम इसी दृष्टिकोण को जारी रख सकते हैं।

9. प्रतिचक्रीय उपायों को प्रभावी रूप से कार्यान्वित करने के लिए हमें समग्र तथा क्षेत्रीय स्तरों पर कारोबार चक्रों का अनुमान लगाने तथा तत्काल समय पर उसकी पहचान करने की अपनी क्षमता में सुधार करना होगा। इसके लिए बेहतर गुणवत्ता वाले आर्थिक एवं वित्तीय आंकड़ों और बेहतर विश्लेषणात्मक क्षमताओं की आवश्यकता होगी।

लीवरेज

10. अनुमान दर्शाते हैं कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली में लीवरेज काफी कम है। लीवरेज अनुपात की गणना हेतु हमारे बैंकों के एसएलआर पोर्टफोलियो को शामिल किए जाने के तथ्य के बावजूद, भारतीय बैंकों को लीवरेज अनुपात की आवश्यकता को पूरा करने में कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि कई भारतीय बैंकों की टियर I पूंजी की स्थिति संतोषजनक (9% से अधिक) है और उनका डेरिवेटिव पोर्टफोलियो भी बहुत बड़ा नहीं है।

चलनिधि

11. भारतीय बैंकों के सामने चलनिधि मानकों को अपनाने के लिए प्रमुख चुनौती उस क्षमता का विकास करने की है जो संबंधित आंकड़े सही और ब्योरेवार रूप में इकठ्ठा करने से संबंधित है। चूंकि हमारे वित्तीय बाजारों को उन्नत देशों के बाजारों के स्तर का तनाव झेलने का अनुभव नहीं है, अत: हमारे पास ऐसा अनुभव नहीं है जिसका उपयोग किया जा सके। अतः तनाव परिदृश्य का सही रूप में पूर्वानुमान लगाने की प्रक्रिया काफी जटिल हो सकती है। सकारात्मक पक्ष में, हमारे अधिकतर बैंक खुदरा कारोबार मॉडल को अपनाते हैं और अल्पावधि अथवा ओवरनाइट थोक निधीयन पर उनकी निर्भरता सीमित है। उनके पास भारी मात्रा में तरल आस्तियां हैं जिनसे वे नए मानकों को पूरा कर सकते हैं।

12. एक मुद्दा यह है कि प्रस्तावित चलनिधि अनुपात का आकलन करने के लिए एसएलआर की सांविधिक जमाराशि को किस सीमा तक हिसाब में लिया जाए। इस बारे में यह भी तर्क दिया जा सकता है कि इस राशि को हिसाब में ही न लिया जाए क्योंकि यह राशि अपने पास निरंतर आधार पर बनाए रखने के लिए है। तथापि, यह उचित होगा कि दबाव की स्थिति में कम-से-कम एसएलआर जमाराशि का एक भाग चलनिधि अनुपात की गणना के लिए हिसाब में लिया जाए, विशेष रूप से इसलिए कि ये ऐसे सरकारी बांड हैं जिन पर केंद्रीय बैंक चलनिधि उपलब्ध कराता है।

13. कुल मिलाकर, हमारा यह अनुमान है कि भारतीय बैंक निर्धारित अवधि के भीतर बासेल III मानदंडों को पूरा करने के लिए अच्छी स्थिति में हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनके सामने कोई चुनौतियां नहीं होंगी। उनके सामने जोखिम प्रबंधन प्रणाली को उन्नत बनाने की

तथा जटिल निर्णय लेने की कला सीखने की चुनौती होगी। महत्त्वपूर्ण चुनौती तेजी से बढ़ती हुई ऋण-जरूरतों को पूरा करने की होगी और इसका सामना अधिक कठोर विनियामक व्यवस्था के साथ सामंजस्य रखते हुए करना होगा। मुझे विश्वास है आप इस सम्मेलन के दौरान इन चुनौतियों पर जरूर 'चिंतन' करेंगे।

दूसरा मुद्दा : क्या भारतीय बैंकों का लक्ष्य वैश्विक बैंक बनने का होना चाहिए?

14. अब मैं दूसरे मुद्दे पर बात करना चाहूंगा जो बार-बार उभरकर आता है और वह यह है कि क्या भारतीय बैंकों का लक्ष्य वैश्विक बैंक बनने का होना चाहिए? जो लोग इस विचार का समर्थन करते हैं उनमें से अधिकतर लोगों ने इसकी लागत तथा लाभों के बारे में विश्लेषणात्मक रूप से सोचा नहीं है; वे इसे केवल एक महत्त्वाकांक्षा के रूप में देखते हैं जो भारत की बढ़ती अंतरराष्ट्रीय प्रोफाइल के अनुरूप है।

15. नरसिंहम (II) समिति ने 1998 की अपनी रिपोर्ट में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के लिए एक त्रि-स्तरीय ढांचे की परिकल्पना की थी: शीर्ष स्तर पर 3 अथवा 4 ऐसे बड़े बैंक जिनकी उपस्थिति अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हो, 8-10 मध्यम आकार वाले ऐसे बैंक जिनकी शाखाओं का नेटवर्क देश भर में फैला हुआ हो एवं ये सार्वभौमिक (यूनिवर्सल) बैंकिंग में संलग्न हों तथा निचले स्तर पर छोटे क्षेत्रों में कार्यरत स्थानीय और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक। तथापि, भारतीय बैंकिंग प्रणाली का समेकन उस रूप में नहीं हुआ जिस रूप में नरसिंहम समिति की परिकल्पना थी। वर्तमान ढांचे में भारत में 81 अनुसूचित वाणिज्य बैंक हैं जिनमें से 26 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक हैं, 21 निजी क्षेत्र के बैंक हैं और 34 विदेशी बैंक हैं। सरसरी तौर पर देखने से ही पता चल जाता है कि बैंकिंग ढांचे का यह विभाजन नरसिंहम II की अपेक्षा के अनुसार नहीं है।

16. भारतीय बैंकिंग प्रणाली की परिकल्पित संरचना के इस मुद्दे का स्वाभाविक परिणाम है बैंक समेकन के विषय पर भारतीय रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण। बैंक समेकन पर हमारा विचार यह है कि यह प्रक्रिया बाज़ार द्वारा संचालित, लाभप्रदता के विचारों पर आधारित तथा विलय एवं समामेलन (एमएंडए) से हो। इसकी पहल बैंकों के बोर्डों द्वारा की जानी चाहिए और उन्हें यह निर्णय कारोबार माडल की सहक्रिया एवं व्यापार-संस्कृति की अनुकूलता के आधार पर किया जाना चाहिए। बैंकिंग प्रणाली के पुनर्गठन में रिज़र्व बैंक की भूमिका सामान्यत: केवल एक सहूलियतकर्ता के रूप में होगी।

17. इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि विलय के माध्यम से बैंक समेकन हमेशा एक बेहतर विकल्प नहीं होता। इसके सकारात्मक पक्ष हैं - एक्सपोजर का एक उच्चतर आधार, अंतरराष्ट्रीय स्वीकृति तथा मान्यता, बेहतर जोखिम प्रबंधन तथा बड़े पैमाने के कारोबार एवं संभावनाओं के चलते वित्त की स्थिति में सुधार। इसे आंतरिक (ऑरगेनिक ग्रोथ) एवं बाह्य उपायों (इनऑरगेनिक ग्रोथ) से हासिल किया जा सकता है। नकारात्मक पक्ष में, अनुभव यह दर्शाता है कि समेकन तब असफल हो जाता है जब कारोबार व्यवस्था में कोई तालमेल न हों और विलय होने वाले बैंकों की व्यापार संस्कृति एवं प्रौद्योगिकी प्लैटफार्म में कोई संगति न हो।

18. बैंक समेकन पर मोटे तौर पर चर्चा के बाद मैं दो विशिष्ट प्रश्न पूछना चाहता हूँ : (i) क्या भारतीय बैंक वैश्विक आकार के बैंक बन सकते हैं? ; (ii) क्या भारतीय बैंकों को वैश्विक आकार का बैंक बनने का प्रयास करना चाहिए?

19. पहले प्रश्न के संबंध में स्थिति यह है कि आस्तियों के आकार के आधार पर वर्तमान वैश्विक लीग सारणी में हमारा सबसे बड़ा बैंक अर्थात् भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआइ) अपने सहयोगी बैंकों को मिलाकर 74वें नंबर पर है, उसके बाद आइसीआइसीआइ बैंक 154वें नंबर पर तथा बैंक ऑफ बड़ौदा 188 नंबर पर है। अत: उचित समेकन के बाद भी हमारे किसी भी बैंक के लिए वैश्विक लीग के सर्वोच्च दस बैंकों में स्थान पाना संभव नहीं होगा।

20. अब अगला प्रश्न यह है कि क्या भारतीय बैंकों को वैश्विक बैंक बन जाना चाहिए? इस पर लोगों के विचार अलग-अलग हैं। जो यह तर्क देते हैं कि हमारे बैंकों को वैश्विक स्तर का बैंक बन जाना चाहिए उनका विचार है कि मुद्दा यह नहीं है कि वैश्विक क्रम में हमारे बैंकों का स्थान क्या है बल्कि जो मुद्दा है वह हमारे बैंकों की वैश्विक स्तर पर सुदृढ़ उपस्थिति का है। इस संबंध में प्रमुख तर्क यह है कि भारतीय कंपनियों के बढ़ते वैश्विक आकार एवं प्रभाव के अनुरूप भारतीय बैंकों की वैश्विक स्तर पर उपस्थिति दर्ज होनी चाहिए। जो लोग भारतीय बैंकों को वैश्विक बैंक बन जाने का विरोध करते हैं उनकी राय यह है कि भारतीय बैंकों को बाहर की बजाए अपने देश के अंदर झांकना चाहिए, वैश्विक आकार का बैंक बनने के बारे में सोचने की बजाए उनको अपने देश में वित्तीय गहनता को बढ़ाने के प्रयासों पर ध्यान देना चाहिए।

21. बीच का रास्ता अपनाते हुए यह तर्क देना संभव है कि बढ़ती वैश्विक उपस्थिति के लिए बाहर की ओर देखने और वित्तीय गहनता में बढ़ोतरी के लिए अंदर की ओर देखने का विचार परस्पर विरोधी नहीं है; दोनों लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जा सकता है।

22. वैश्विक वित्तीय संकट की शुरुआत होने के कारण विदेशों में हमारे बैंकों के तेजी से हो रहे विस्तार में निश्चय ही ठहराव आ गया है। तथापि, इसमें निहित जोखिमों के बावजूद, हमारे कुछ बड़े बैंकों के लिए यह एक अच्छा अवसर है कि वे आंतरिक (आर्गेनिक) तथा बाह्य

(इनआर्गेनिक) दोनों तरीकों से समेकन का प्रयास करें। उन्हें उन क्षेत्रों की ओर सक्रियता से देखना चाहिए जहां आकर्षक अधिग्रहण की संभावना बेहतर हो।

23. अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय बैंकों को अवसर देखकर अपनी वैश्विक उपस्थिति बढ़ानी चाहिए भले ही सारणी में शीर्ष में उनका नाम शामिल न हो।

तीसरा मुद्दा : क्या हमें यह अनिवार्य कर देना चाहिए कि विदेशी बैंक केवल सब्सिडियरियों के रूप में आएं ?

24. अब मैं अगले जिस मुद्दे पर बात करना चाहूँगा वह यह है कि क्या हमें यह अनिवार्य कर देना चाहिए कि विदेशी बैंक केवल सब्सिडियरी के रूप में ही हमारे यहां आ सकते हैं?

25. रिज़र्व बैंक द्वारा 2005 में विदेशी बैंकों को भारत में आने के लिए बनाया गया रोड-मैप विदेशी बैंकों को या तो शाखा के रूप में अथवा सब्सिडियरी के रूप में आने का विकल्प प्रदान करता है, किंतु एक ही समय में दोनों का विकल्प नहीं देता है। फिर भी, सभी विदेशी बैंकों ने अब तक केवल शाखा के रूप में आने का विकल्प ही चुना है। वर्तमान में भारत में 34 विदेशी बैंक कार्य कर रहे हैं जिनकी कुल 315 शाखाएं हैं और इनके पास अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों का 7.2 प्रतिशत हिस्सा है।

26. हाल के संकट से उत्पन्न मुद्दों में से एक बड़ा मुद्दा प्रणालीगत तथा नैतिक जोखिम का है जिसका संबंध प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं (एसआइएफआइ) से है। हाल के संकट का गहरा संबंध एसआइएफआइ की विफलता से है जिसने अपने आकार, जटिलता एवं परस्पर संबद्धता के कारण वैश्विक वित्तीय प्रणाली में भारी व्यवधान पैदा कर दिया। वर्तमान में वित्तीय स्थिरता बोर्ड का ध्यान जिन मुद्दों ने आकर्षित कर रखा है उनमें से एक दबाव की स्थिति में एसआइएफआइ के सुचारु समाधान की प्रक्रिया में सुधार लाने का है। दो तरह के विचार विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। पहला विचार है, एसआइएफआइ में यह क्षमता होनी चाहिए कि वह तनाव की स्थिति में भी न्यूनतम स्तर पर कार्यरत रह सके और दूसरा विचार यह है कि उनके समाधान के लिए करदाताओं को हानि नहीं पहुंचनी चाहिए। एसआइएफआइ के समाधान के संबंध में आने वाली इन्हीं संभावित बाधाओं ने विदेशी बैंकों की शाखा अथवा सब्सिडियरी के रूप में उपस्थिति संबंधी विषय पर जोरदार बहस छेड़ दी है।

27. सब्सिडियरी के रूप में उपस्थिति से नियामकों को कई प्रकार की सहूलियतें मिलती हैं। पहली, सब्सिडियरियों में प्रबंधन से जुड़े निर्णय मुख्यतया स्थानीय आर्थिक स्थिति के अनुसार लिये जाते हैं; दूसरी, मूल बैंक तथा देशी बैंकों की पूंजी में एक स्पष्ट अंतर होता है जो देशी जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करती है; तीसरी, सब्सिडियरियों के बोर्डों के स्वतंत्र निदेशक बैंक तथा उनके मालिकों के बीच पर्याप्त अंतर बनाए रखते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बोर्ड का रुझान, विशेषत: तनाव की स्थिति में, पूरी तरह से मालिकों के पक्ष में और देशी जमाकर्ताओं के खिलाफ न हो; और अंतत: शाखा के रूप में परिचालित बैंक की अपेक्षा स्थानीय निगमन से बैंक के कार्यकलापों को नियंत्रित करने में मेजबान देश के प्राधिकारियों को अधिक सुविधा होती है।

28. लेकिन ऐसा भी नहीं है कि विदेशी बैंकों के स्थानीय निगमन के दोष नहीं हैं। इसका संभावित जोखिम यह है कि विदेशी बैंक देशी बैंकिंग प्रणाली पर हावी हो जाएंगे। सामान्य समय में इसका प्रणालीगत दुष्प्रभाव हो सकता है जिसमें संकट के समय में और बढ़ोतरी हो सकती है। जिन कुछ देशों में विदेशी बैंक हावी हैं वहां यह देखा गया है कि ये बैंक तेजी के दौरान स्थानीय बैंकों की कीमत पर शीघ्रता से अपना कारोबार बढ़ा लेते हैं परंतु तनाव के दौरान उसी शीघ्रता से अपना कारोबार कम भी कर देते हैं। हालांकि भारत में विदेशी बैंक केवल शाखा के रूप में कार्य कर रहें हैं, फिर भी भारत सहित सभी उभरती अर्थव्यवस्थाओं का कमोबेश कुछ ऐसा ही अनुभव रहा है।

29. संकट के बाद हम जान गए हैं कि सब्सिडियरी रूप को अनिवार्य बनाना घरेलू हितों की रक्षा का निश्चित उपाय नहीं है क्योंकि अपने देश में संकट का सामना कर रहे विदेशी बैंक अंततः अपनी सब्सिडियरियों को छोड़ दे सकते हैं। इस प्रवृत्ति का एक अच्छा दृष्टांत सरकारी ऋण संकट के दौरान यूरोपीय संघ में हमने देखा है। अत्यधिक प्रयास के बाद ही यूरोपीय संघ विदेशी बैंकों पर उनके यूरोपीय सब्सिडियरियों को समर्थन देते रहने के लिए दबाव डाल सका अथवा उनको मना सका। फिर भी, कर्ज की आपूर्ति पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ा।

30. कुल मिलाकर, शाखा मोड की तुलना में विनियामक तथा समाधान संबंधी दृष्टिकोण से सब्सिडियरी मोड के कई संभावित लाभ हैं। तथापि, इस संबंध में कई मुद्दे उभरकर आते हैं: (i) स्थानीय निगमन के कारण क्या सब्सिडियरियों का व्यवहार पूर्णतः राष्ट्रीय संस्था के रूप में किया जाना चाहिए? यदि नहीं तो प्रतिबंधों की प्रकृति तथा उसकी सीमा क्या होनी चाहिए? (ii) क्या सभी नये आगन्तुकों के लिए उपस्थिति का स्वरूप सब्सिडियरी के रूप में अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए अथवा कतिपय मानदंडों के आधार पर चयनित रूप में इसे लागू किया जाना चाहिए? तथा (iii) विदेशी बैंकों की वर्तमान शाखाओं के संबंध में कौन-सा दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए - क्या उन्हें सब्सिडियरी के

रूप में परिवर्तित करने हेतु प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए? ये तथा इनसे संबद्ध कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन पर रिज़र्व बैंक द्वारा हाल में प्रकाशित किए जाने वाले चर्चा पत्र में बहस होगी।

चौथा मुद्दा: बैंकिंग क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानूनों को नए सिरे से लिखने की जरूरत क्यों है ?

31. हमारे पास इस समय जो सांविधिक व्यवस्था है उसमें बैंकिंग उद्योग के विभिन्न खंडों के नियंत्रण के लिए विभिन्न प्रकार के कानून हैं जो असमंजस में डालते हैं। राष्ट्रीयकृत बैंक बैंकिंग कंपनी (अधिग्रहण तथा उपक्रम का अंतरण) अधिनियम, 1970 तथा 1980 से नियंत्रित हैं। भारतीय स्टेट बैंक तथा उसके अनुषंगी बैंक उनके संबंधित अधिनियमों से नियंत्रित हैं। निजी क्षेत्र के बैंक कंपनी अधिनियम, 1956 तथा बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 के अधीन आते हैं। कंपनी अधिनियम की धारा 592 के अंतर्गत पंजीयक के पास अपने दस्तावेजों को पंजीकृत कराने वाले विदेशी बैंक भी बैंकिंग विनियमन अधिनियम के अंतर्गत बैंकिंग कंपनियां हैं। बैंकिंग विनियमन अधिनियम के कुछ प्रावधान सरकारी क्षेत्र के बैंकों पर भी लागू किए गए हैं। उसी प्रकार, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के कुछ प्रावधान राष्ट्रीयकृत बैंकों, भारतीय स्टेट बैंक तथा उसके अनुषंगी बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंकों तथा विदेशी बैंकों पर भी लागू हैं।

32. अलग-अलग स्वरूप के विभिन्न विधानों के बावजूद इस सांविधिक व्यवस्था ने बैंकिंग प्रणाली को व्यवस्थित बनाये रखने में मदद करके अच्छी तरह से कार्य किया है। बैंककारी विनियम अधिनियम ने न केवल समय के साथ अपनी उपयोगिता को बनाए रखा है बल्कि इसके कतिपय प्रावधानों ने संकट से निपटने तथा वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने में रिज़र्व बैंक की मदद की है। इन प्रावधानों में न्यूनतम चुकता पूंजी तथा रिज़र्व की आवश्यकता, लाभांश के भुगतान पर प्रतिबंध, लाभ के एक निश्चित प्रतिशत का रिज़र्व में अंतरण, एसएलआर का निर्धारण, संबद्ध उधारियों पर प्रतिबंध, देशी देयताओं का एक निश्चित प्रतिशत भारत में आस्तियों के रूप में रखना आदि शामिल हैं।

33. यह कहने की जरूरत नहीं है कि प्रत्येक विधान तत्कालीन परिस्थितियों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया था तथा परिस्थितियों तथा संदर्भों में हुए बदलाव को परिलक्षित करने के लिए लगभग सभी विधानों में समय-समय पर संशोधन किए गए। विभिन्न विधानों की समीक्षा करने तथा इन्हें नये सिरे से तैयार करने की जरूरत है जिनके कारण निम्नानुसार हैं: पहला, विभिन्न बैंक विभिन्न अधिनियमों से नियंत्रित होते हैं जिसके कारण असमान कार्यक्षेत्र की स्थिति उत्पन्न होती है तथा समुचित प्रतिस्पर्धा बनाये रखने के लिए इसे ठीक करना आवश्यक है। दूसरा, एकल एवं सामान्यीकृत विधान से, जो सभी बैंकों पर लागू होगा, पारदर्शिता, व्यापकता तथा स्पष्टता आएगी। तीसरा, बैंकिंग क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले मूल विधानों तथा बैंकिंग क्षेत्र पर लागू होने वाले अन्य विधानों के बीच के विरोधों को दूर करने की भी जरूरत है। उदाहरणस्वरूप, प्रतिस्पर्धा (संशोधन) अधिनियम, 2007 के अंतर्गत उपक्रमों को एक साथ मिलाने की प्रक्रिया तथा बैंकिंग कंपनियों के समामेलन से जुड़े बैंकिंग विनियमन अधिनियम के प्रावधानों में विरोध है। बैंकिंग से जुड़े कानूनों की समीक्षा करते समय इस प्रकार के विरोधों को दूर किया जाना चाहिए।

34. वैश्विक वित्तीय संकट से प्राप्त अनुभव इस बात की पुष्टि करता है कि इन विधानों में संशोधन करने की जरूरत है। हाल के संकट ने ऐसे कई क्षेत्रों को उजागर किया है जहां विषय से जुड़ा कोई विधान नहीं था अथवा वर्तमान विधान अपर्याप्त था जिनके संबंध में उल्लेखनीय वैधानिक कार्रवाई करने की आवश्यकता है। उदाहरणस्वरूप, कई ऐसे मुद्दे हैं जिनके संबंध में वैधानिक रूप से ध्यान देने की जरूरत है, जिनमें ये शामिल हैं : विफल होनेवाले बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं का समुचित रूप से समाधान चाहे ये संस्थाएं देशी हों अथवा विदेशी, सूचनाओं के आदान-प्रदान हेतु देशी तथा विदेशी विनियामकों के बीच सहयोग, अंतरराष्ट्रीय रिपोर्टिंग मानक (आइएफआरएस) के साथ भारतीय लेखांकन मानक का समन्वयन, समेकित पर्यवेक्षण के लिए रिज़र्व बैंक को अधिकार प्रदान करना, वित्तीय संगुटों का पर्यवेक्षण आदि।

35. बैंकिंग क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानूनों को नए सिरे से लिखने का कार्य आपस में जुड़े हुए कतिपय उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। पहला, स्पष्टता तथा पारदर्शिता लाने के लिए बैंकिंग उद्योग के विभिन्न खंडों का नियंत्रण करनेवाले तथा बैंकिंग कारोबार के विविध आयामों को नियंत्रित करनेवाले विभिन्न विधानों को एक साथ लाने की जरूरत है ताकि एक ही संबंधित कानून बनाया जा सके। नया विधान तैयार करने का दूसरा उद्देश्य है हमारे बैंकिंग क्षेत्र के वैधानिक ढांचे में उन प्रावधानों को जोड़ना जो संकट से प्राप्त सबक को दर्शा सके, वैश्वीकृत वित्तीय प्रणाली की गतिशीलता तथा जटिलता को स्वीकार कर सके, जिसमें भविष्य की स्थिति संबंधी दृष्टि हो और जो वित्तीय स्थिरता में मदद कर सके। अंत में, बैंकिंग क्षेत्र संबंधी कानूनों में संशोधन करने की प्रेरणा इस बात से भी मिलनी चाहिए कि बैंकिंग क्षेत्र न केवल

भारत की वृद्धि को बढ़ाने में मददगार रहा है बल्कि वृद्धि को समावेशी बनाने में भी इसकी भूमिका रही है।

36. वित्त मंत्री द्वारा पिछले बजट में क्षेत्र की जरूरत के अनुसार वित्तीय क्षेत्र संबंधी कानूनों की खामियों को दूर करके उन्हें नए सिरे से लिखने के लिए वित्तीय क्षेत्र वैधानिक सुधार आयोग के गठन का निर्णय लिया गया है जो अत्यंत सामयिक तथा महत्त्वपूर्ण है।

37. तथापि, इस बात को ध्यान में रखना जरूरी है कि नीति अथवा विनियामक ढांचे में बदलाव करने का अधिकार वैधानिक सुधार आयोग का नहीं हो सकता है। आयोग का कार्य प्रारंभ होने से पहले किए जानेवाले बदलावों के बारे में बहस के बाद ही निर्णय लिया जाना चाहिए ताकि नीतिगत दिशा के संबंध में आयोग के समक्ष स्पष्ट अधिदेश हो। संक्षेप में कहें तो वैधानिक सुधार आयोग का कार्य नीतिगत जरूरत के हिसाब से तय होना चाहिए न कि इसके विपरीत। यह तथ्य इस बात को रेखांकित करता है कि हम सभी अर्थात बैंकों तथा बैंकिंग विनियामक के लिए नीतिगत दिशा के बारे में चर्चा करना कितना महत्त्वपूर्ण है। मेरी आशा है कि बैंकिंग क्षेत्र में वैधानिक परिवर्तन के विभिन्न पक्षों पर चर्चा करके यह सम्मेलन इस दिशा में आगे का मार्ग प्रशस्त करेगा।

पांचवां मुद्दा: दक्षता संबंधी मानदंडों के अनुसार भारतीय बैंकों की स्थिति क्या है?

38. 2003-08 के दौरान भारत की तेज वृद्धि में गोचर तथा अगोचर कई कारक रहे हैं। एक ऐसा कारक जिसके योगदान को कम करके आंका गया वह है वित्तीय क्षेत्र का योगदान जिसने बड़े स्तर के बेहतर गुणवत्तायुक्त वित्तीय सहायता के जरिए वृद्धि दर को बढ़ाने में मदद की। जिस एक ही आंकड़े से इसका प्रमाण मिल सकता है वह है - जीडीपी के अनुपात के रूप में बैंकों द्वारा दिया गया कर्ज का आंकड़ा जो मार्च 2000 के अंत के 29 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2010 के अंत में 55 प्रतिशत हो गया।

39. भारतीय रिज़र्व बैंक की मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट 2006-08 का विश्लेषण दर्शाता है कि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने पिछले 15 वर्षों के दौरान उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि का प्रदर्शन किया है तथा उत्पादकता/दक्षता संबंधी कई संकेतक वैश्विक स्तर के आसपास पहुंच चुके हैं। प्रौद्योगिकीय उन्नयन तथा स्टाफ के पुनर्गठन के कारण हाल के वर्षों में बैंकों की परिचालनात्मक दक्षता में विशेष सुधार हुआ है। उल्लेखनीय है कि वैश्विक वित्तीय प्रणाली में उथल-पुथल के बावजूद पिछले 2-3 वर्षों के दौरान भी परिचालनात्मक दक्षता में सुधार जारी रहा। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सरकारी क्षेत्र का निष्पादन निजी क्षेत्र के नए बैंकों तथा विदेशी बैंकों के समान हो गया है। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आम धारणा के विपरीत स्वामित्व और दक्षता में कोई उल्लेखनीय संबंध नहीं है - अति कुशल बैंक तीनों क्षेत्रों अर्थात सरकारी क्षेत्र, निजी क्षेत्र तथा विदेशी बैंक क्षेत्र में हैं।

40. इस उल्लेखनीय उपलब्धि के लिए भारतीय बैंक गौरवान्वित अनुभव कर सकते हैं जो सही भी है। परंतु इन उपलब्धियों के भरोसे वे आराम से नहीं बैठ सकते। दोहरे अंकों वाली तथा समावेशी वृद्धि की हमारी सामूहिक आकांक्षा की प्राप्ति हेतु हमें राष्ट्रीय बचत में वृद्धि करने तथा इसे निवेश में लगाने की जरूरत है। इसका अर्थ यह है कि बैंकों को जमाकर्ताओं को दी जाने वाली ब्याज दरों में बढ़ोतरी करने तथा उधारकर्ताओं पर लगाई जाने वाली ब्याज दरों में कमी करने की जरूरत है - अन्य शब्दों में, मध्यस्थन लागतों को कम करें अथवा तकनीकी भाषा में कहें तो निवल ब्याज मार्जिन(एनआइएम) को कम करें।

41. समग्र स्तर पर भारतीय बैंकिंग प्रणाली का निवल ब्याज मार्जिन 1999-2000 के 3 प्रतिशत से कम होकर 2009-10 में 2.5 प्रतिशत रह गया है। मानक पर्यवेक्षी मानदंडों, अर्थात पूंजी, आस्ति की गुणवत्ता, प्रबंधन, अर्जन, चलनिधि तथा प्रणाली (कैमल) के अनुसार भी उल्लेखनीय सुधार हुआ है। फिर भी, सामाजिक क्षेत्र की अनिवार्यताओं, जैसे कि प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को उधार दिए जाने तथा सरकार की गरीबी-रोधी पहलों के लिए कर्ज देने, को हिसाब में लेने के बाद भी भारतीय बैंकिंग प्रणाली का निवल ब्याज मार्जिन कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में अधिक है।

42. हमारे और हमारे समकक्ष देश-समूहों के बीच दक्षता संबंधी जो अंतर है वही हमारे लिए एक संकेत है और इस अंतर को हमें कम करना है। दक्षता में वृद्धि करने के कई तरीके हैं। अब जो सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है वह है मजदूरी तथा वेतन सहित गैर-ब्याज व्यय, लेनदेन लागत तथा प्रावधान संबंधी व्यय जैसे परिचालन लागतों में इष्टतम समायोजन करके जो परिचालन दक्षता हासिल की गई है उसमें और सुधार लाना है। इससे बैंकों को लाभप्रदता बनाए रखते हुए उधार दरों को कम करने में मदद मिलेगी।

43. भारतीय बैंकों की आय अन्य प्रमुख एशियाई अर्थव्यवस्थाओं से उच्चतर रही है जैसा कि आस्तियों पर प्रतिलाभ (आरओए) तथा इक्विटी पर प्रतिलाभ(आरओई) से ज्ञात होता है। फिर भी, उन पर कुल आस्तियों की तुलना में गैर-ब्याज व्यय के रूप में माप की जाने वाली उच्चतर परिचालन लागत का उच्चतर भार है जो उनकी मूल्यन करने की दक्षता में बाधक के रूप में कार्य करता है तथा प्रतिस्पर्धात्मक रूप में एनआइएम को युक्तिसंगत बनाने की उनकी क्षमता को प्रभावित

करता है। भारतीय बैंकों के सामने जो स्पष्ट कार्य है वह है उत्पादकता में सुधार तथा दक्षता में संवर्धन करके एवं प्रौद्योगिकी का लाभ उठाते हुए परिचालनात्मक लागतों में वहनीय कमी लाने के अपने प्रयासों को जारी रखना। आस्तियों की गुणवत्ता में सुधार लाकर, व्यवहार्य आस्तियों के संबंध में कर्ज का सावधानीपूर्वक पुनर्गठन करके तथा वसूली अथवा कोटि-उन्नयन के जरिए अनर्जक कर्ज में कमी लाने के जरिए भी परिचालन लागत में कमी लाई जा सकती है। विशेष रूप से कुछ बड़े बैंकों की दक्षता में सुधार लाने की जरूरत है जो अपने समकक्ष देशी बैंकों के तथा वैश्विक मानकों के अनुरूप है।

44. दक्षता के संबंध में मुझे इस बात से कष्ट तथा कुतूहल होता है कि हमारे बैंक वित्तीय समावेशन को एक बोझ के रूप में देख रहे हैं न कि एक अवसर के रूप में। यदि प्रभावी ढंग से लागू किया जाए तो वित्तीय समावेशन से बैंकों को कम लागत वाली राशि उल्लेखनीय मात्रा में प्राप्त होगी, साथ ही उन्हें कम मात्रा वाले खंड में उधार देने का अवसर भी मिलेगा। कम मात्रा वाले खंड में उधार देना इस बात को देखते हुए संभव हो पाएगा क्योंकि रिज़र्व बैंक ने अब कम मात्रा वाले खंड में लगाई जाने वाली ब्याजदरों से विनियमन हटा लिया है। वित्तीय समावेशन को लाभजनक रूप में अपनाने के लिए बैंकों को अपने कारोबारी मॉडलों को निरंतर नया रूप देते रहना होगा तथा उत्पादों और सेवाओं में त्वरित ढांचागत रूपांतरण के जरिए बढ़ रही अर्थव्यवस्था की मांग के अनुरूप उत्पादों और सेवाओं में बदलाव करना होगा।

निष्कर्ष

45. अब मैं विषय को समेटना चाहता हूं। मैंने सम्मेलन में चर्चा हेतु निम्नलिखित पांच मुद्दे उठाएः

(i) क्या भारतीय बैंक बासेल III के लिए तैयार हैं ?

(ii) क्या भारतीय बैंकों का लक्ष्य वैश्विक बैंक बनने का होना चाहिए ?

(iii) क्या हमें यह अनिवार्य कर देना चाहिए कि विदेशी बैंक केवल सब्सिडियरियों के रूप में ही आएं?

(iv) बैंकिंग क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानूनों को नए सिरे से लिखने की जरूरत क्यों है?

(v) दक्षता संबंधी मानदंडों के अनुसार भारतीय बैंकों की स्थिति क्या है?

46. मैं यह स्वीकार करता हूं कि यह किसी भी रूप में भारतीय बैंकिंग के प्रमुख मुद्दों की पूरी सूची नहीं है। वस्तुतः, इसकी तैयारी करते समय मैंने अपने कार्यालय में उन मुद्दों की सूची देने के लिए कहा जिनपर मैं यहां चर्चा कर सकता हूँ। उन्होंने पहले मुझे 50 मुद्दों की एक सूची दी और कहा कि यदि आप चाहें तो सूची और लंबी हो सकती है। यह इस बात को दर्शाता है कि बैंकिंग सुधार का मुद्दा भारतीय रिज़र्व बैंक के लिए कितना महत्त्व रखता है। यह कहने की जरूरत नहीं है कि लंबी सूची में से केवल पांच मुद्दों का चुनाव करते समय मुझे काफी कठोर होना पड़ा ताकि उद्घाटन सत्र में मेरा संबोधन अधिक लंबा न हो। औपचारिक व अनौपचारिक मंच पर जब हम मिलेंगे तो शेष अन्य मुद्दों पर चर्चा करने तथा उनके संबंध में अपने विचार आपके समक्ष रखने में मुझे प्रसन्नता होगी।

47. उद्घाटन सत्र के बाद आपके लिए विशिष्ट सत्र होगा जिसका विषय है 'चिंतन, नवोन्मेष एवं प्रेरणा'। इसकी विषय-वस्तु व्यापक और गंभीर है तथा यह आपको बड़े परिदृश्य पर विचार करने के लिए प्रेरित करेगा। वित्तीय संकट ने वैश्विक हालात को व्यापक क्षति पहुंचाई है तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था को कई वर्ष पीछे धकेल दिया है। जैसा कि आप जानते हैं, भारत पर संकट का असर अपेक्षाकृत कम पड़ा। परंतु इसे ध्यान में रखें कि यह बात केवल तुलनात्मक दृष्टि से ही सही है। हमें इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि संकट के चलते भारत ने भी भारी कीमत चुकाई है क्योंकि इसके कारण हमारी वृद्धि की गति में कमी आई और गरीबी के स्तर में कमी लाने के मार्ग में व्यवधान उत्पन्न हुआ। देश के करोड़ों गरीब लोगों के प्रति हमारा दायित्व है कि अब तक जो समय व्यर्थ चला गया है उसे पूरा करने हेतु हम कार्य योजना को साकार रूप देने के लिए पूरे उत्साह से जुट जाएं ताकि दो अंकों वाली तथा समावेशी वृद्धि के सपने को साकार किया जा सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली कार्रवाई पर बैंकिंग क्षेत्र को विचार करना चाहिए, इन विचारों को कार्य-रूप देने के लिए उन्हें नई रणनीतियां बनानी चाहिए और इन रणनीतियों को लागू करने के लिए अपने स्टाफ को प्रेरित करना चाहिए।

48. मैं आप सभी को शुभकामनाएं देता हूँ कि आप सभी आगे दो दिन और उसके बाद भी चिंतन करने, नया सोचने तथा प्रेरित करने की दिशा में अग्रसर हों।